कर्म के साथ लयबद्धता

❑ ऍन्थानी जी.रड जूनियर

अनुवाद : संतोष शर्मा

चिन्तनों की मौलिक अवधारणाओं को चुनौती देने वाला, अति निपुणता से रचित एक निबंध जब डाक में आया तो मैं सतर्क हो गया । स्वायत्तता एवं आत्म संयम वे आदर्श हैं जिन्हें मैंने सदैव अमूल्य माना है । मेरी नैतिक शब्दावली के एक बड़े हिस्से के गठन के लिए मैं कांट एवं अन्य ज्ञानोदयवादी चिंतकों पर निर्भर हूं । मैंने अपनी किशोर बेटी और अन्य विद्यार्थी / विद्यार्थनियों को स्वायत्त होने एवं सहकर्मियों के दबाव के प्रति एक समालोचक रुख अपनाने की सलाह दी है । और मैं स्वयं को भी तब कोसता हूं जब कोई अन्य व्यक्ति मेरे लिए वे निर्णय लेता है जो मुझे स्वयं को लेने चाहिये थे । एक शिक्षा प्रशासक के रूप में मुझे पेशेवर ढंग से नियंत्रक की स्थिति में होना पसंद है । हालांकि कभी मैं संदेह भी करने लगता हूं कि क्या वास्तव में नियंत्रण की स्थिति में हूं ।

हीसून बाई अपने निबंध के शीर्षक से ही हमें उकसा देती है। स्वायत्तता को एक वैकल्पिक शब्दावली में पुन: परिकल्पित करने हेतु, बिल्कुल कसी हुई भाषा में वह अपना तर्क रखती है । इस संक्षिप्त प्रतिक्रिया में, मैं उनके कुछ मुद्दों का सार पेश करूंगा, कुछ प्रश्न उठाते हुए मेरे अपने दृष्टिकोण का थोड़ा चित्रण करूंगा। बाई द्वारा रखे गये बिन्दुओं के थोड़े विस्तार के लिए एवं मेरे अपने कुछ बिंदुओं के समर्थन के लिए, मैं कान्ट, स्पिनोजा एवं एलबर्ट सीजर की मदद लूंगा । लयबद्धता और शिक्षा पर बाई के कुछ मतों पर एक छोटी चेतावनी के साथ मैं इस लेख का अन्त करूंगा।

बाई द्वारा किया गया पूर्वी एवं पश्चिमी चितनों का सम्मिश्रण काफी अकाट्य है । वह एक ऐसी धारणा पर प्रश्न उठाती है जो हमारे बहुत सारे नैतिक चिंतन, सामाजिक मनोविज्ञान एवं शैक्षिक प्रक्रियाओं का आधार है । बाई नियंत्रण की भाषा का विरोध करती हैं, क्योंकि नियंत्रण एक विभाजित स्व: को सिद्ध करता है, जिस का एक भाग दूसरे भाग पर शासन करता है या उसे दबाये रखता है । स्वायत्तता की यह धारणा इस विश्वास पर टिकी है कि मनुष्य विवेकशील पशु है । वह हमारा पाशविक, बुभुक्षु, अचेत हिस्सा है, जिसे हमारे सचेत नियमों एवं युक्तियों के नियंत्रण की आवश्यकता है । यही नियंत्रण, तब आत्मनुशासन का आधार बनता है ।

आत्मानुशासन के लिए दिये जाने वाले तर्कों में यह दावा किया जाता है कि उत्तरदायित्व की भावना किसी भी नैतिक व्यवस्था के आवश्यक है; उदाहरणार्थ कान्ट के तर्क । फिर भी स्वायत्तता में कान्ट की दिलचस्पी बाई द्वारा प्रस्तुत सरोकारों से कुछ भिन्न चिंताओं के जवाब में है । कान्ट ने अपने प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय लेख 'ज्ञानोदय क्या है' में इन चिंताओं पर विचार किया है । कान्ट के लिए, ज्ञानोदय मनुष्य द्वारा, स्वयं पर थोपी हुई अवयस्कता की अवस्था से मुक्ति है । किसी अन्य के मार्गदर्शन के बिना अपनी समझ का प्रयोग करने में असमर्थता को अवयस्कता कहते हैं । कान्ट स्व: के बुभुक्षु हिस्से के निषेध एवं नियंत्रण से उतने चिंतित नहीं हैं जितने वह विभिन्न प्रकार के अधिकारों; जो व्यक्तिगत रूप से प्रयुक्त विवेक पर आधारित नहीं हैं। अपने जीवन का उत्तरदायित्व खुद लेने पर ज्ञानोदय होता है जो एक कठिन कार्य है क्योंकि नियंत्रण दूसरों को सौंपना सामान्यत ज्यादा आसान है (कान्ट के तीखे शब्दों में ''अवयस्क रहना कितना आरामदेह है'')।

नैतिक परिपक्वता के लिए बाई द्वारा दिखाये गये पथ की दिशा कहीं और है । उनकी नियंत्रण के रूप में स्वायत्तता की धारणा इस दावे पर आधारित है कि स्व: का विभाजन गलत है क्योंकि वह संपूर्ण है, यदि यह विभाजन; और इसके कारण उत्पन्न नियंत्रण की आवश्यकता, जिसकी बाई आलोचना करती है नैतिक रूप से अपूर्ण है, तो फिर उसकी जगह क्या होना चाहिए? ताओवाद एवं अन्य कई सजीव रूपकों का दृष्टांत देकर वह स्वायत्तता को लयबद्धता समझने के लिए एक सौंदर्यात्मक एवं नैतिक तर्क पेश करती हैं ।

लयबद्धता समग्रतावादी अवधारणा है जिसका अपना आंतरिक, द्वंद्वात्मक तर्क होता है । एवं तार्किक युक्ति है । ताओवादी समन्वय एवं एकीकरण के पक्ष में अपने तर्क को स्थापित करने के लिए बाई तोषक निर्माण और संगीत के उदाहरण देती हैं। ताओवाद की नैतिकता का पक्ष वह इसलिए लेती है कि इस दर्शन में स्व: का नियमन एक भाग का दूसरे पर शासन करने से नहीं बल्कि यह पहचानने में है कि इन भागों का अस्तित्व एक पूर्णता के सापेक्ष ही है; जो पूर्णता तार्किक रूप से इन भागों का निर्धारण करती है । संपूर्णता तो ब्रह्मांड़ है, स्व: केवल एक भाग है जो अन्य भागों के सापेक्ष ही अस्तित्व में है । और यह ऐसे हैं जैसे तोषक में कपड़े के विभिन्न टुकड़े एक सुन्दर समष्ठि का निर्माण करते हैं । बाई द्वारा प्रस्तुत लयबद्धता की

के स्थान को पहचानने पर आधारित है । स्पिनोजा के लिए स्वतंत्रता की प्राप्ति, ईश्वर या प्रकृति के लिए एक ''बौद्धिक प्रेम'' द्वारा होती है ।

स्पिनोजा के नीतिशास्त्र के कई पाठकों द्वारा उठाया गया एक प्रश्न ऐसी नैतिक व्यवस्था में मनुष्य के स्थान से संबंधित है। कुछ लोग इस से संतुष्ट नहीं हैं कि नैतिक शुभ की प्राप्ति मानव की ब्रह्मांड में पूर्व निर्धारित भूमिका की बौद्धिक स्वीकृति में ही है । हीगल की तरह, स्पिनोजा की तत्व मीमांसा व्यवस्था भी बहुत से अस्तित्व वादी चिंतकों को उदासीन एवं असहाय छोड़ देती है ।

लयबद्धता की इस नई शब्दावली के बारे में मेरी भी यही भावना है । मैं इस परिकल्पना के गहन संशय में हूं । ध्यान एवं मनन द्वारा में अपने जीवन में एक तरीके की लयबद्धता लाने का प्रयत्न करता हूं । फिर भी, मेरा प्रश्न है कि, बाई द्वारा प्रस्तुत लयबद्धता क्या उन चुनौतियों के साथ निपटने के लिए पर्याप्त है जहां एक समर्थ नैतिक व्यवस्था की आवश्यकता होती है ?

एल्बर्ट सीजर ने इन्हीं मुद्दों के साथ संघर्ष किया । स्पिनोजा जैसे सीजर ने भी प्राकृतिक दुनियां की नैतिक तटस्थता पर विश्वास किया । फिर भी, सीजर की राय में, एक बेहतर जिन्दगी के लिए मानवीय क्रियाशीलता को आवश्यक दिशा देने के लिए यह विश्वास ही पर्याप्त नहीं है । उन्होंने स्पिनोजा के स्वाभाविक आवश्यकता के दर्शन के साथ एक ईसाई नैतिक अनिवार्यता का संयोजन किया । इस दर्शन के अनुसार एक समृद्ध, पुष्ट, और साहसपूर्ण नैतिक जीवन के लिए लयबद्धता पर्याप्त नहीं होगी । महाविपदाओं एवं दुर्भाग्यों से भरे इन प्राकृतिक जगत को अनिवार्य एवं नैतिक रूप से तटस्थ समझने से व्यक्ति के पास धैर्यवान एवं सहनशील होने के अलावा कोई चारा नहीं बचता । बाई एवं सीजर दोनों ध्यान मनन का मूल्य समझते हैं । सीजर के उस प्रसिद्ध कथन ''जीवन का आदर'' के मूल में, केवल मनुष्यों के लिए ही नहीं, बल्कि सभी जीवित प्राणियों के लिए भला करने की एक नैतिक अनिवार्यता की भावना है । इस प्रकार की अत्यावश्यकता के अभाव में, सीजर का अपने अफ्रिकी अस्पताल में कई वर्षों तक किये गये काम को समझना कठिन हो जाता है । जिसके बारे में सीजर और अन्य लोग लिखते थे, वह लम्बरीनी के सीलन भरे वनों की गहराई में, कभी-कभी शारीरिक परिश्रम, द्वारा उन्होंने (सीजर) ने कर दिखाया। सीजर ने अक्षरश: एवं बौद्धिक रूप से यूरोप एवं इसकी सांस्कृतिक मान्यताओं से अपना मुंह मोड़ लिया । और उन्होंने अपनी जिंदगी को ही अपना तर्क बना दिया । प्राकृतिक विपत्तियों को धैर्यपूर्वक ग्रहण करने के साथ में, मानवीय कर्मों के प्रति सतकर्ता निभाने के इस नमूने को बाई के लयबद्धता के मत के परिवर्द्धित रूप में देखने की, मैं सिफारिश करता हूं ।

लयबद्धता की इस नई शब्दावली के बारे में मेरी भी यही भावना है। मैं इस परिकल्पना के गहन संशय में हूं। ध्यान एवं मनन द्वारा में अपने जीवन में एक तरीके की लयबद्धता लाने का प्रयत्न करता हूं । फिर भी, मेरा प्रश्न है कि, बाई द्वारा प्रस्तुत लयबद्धता क्या उन चुनौतियों के साथ निपटने के लिए पर्याप्त है जहां एक समर्थ नैतिक व्यवस्था की आवश्यकता होती है?

अपने पक्ष का, शिक्षा के क्षेत्र में क्या प्रभाव होगा इसके ऊपर कुछ चर्चा के साथ बाई अपना निबंध समाप्त करती है । अनवरत सूचना तकनीकी के द्वारा गतिमान हमारी उत्तर औद्योगिक दुनियां में, विद्यार्थियों को एक अधिक चिंतनशील एवं ग्रहणशील तरीके के माध्यम से जिंदगी के लिए तैयार करने का आह्वान भावपूर्ण एवं स्वागत योग्य है । फिर भी जो तीखा प्रहार पिछले ग्रीष्म में, मेरी शिक्षा-दर्शन की कक्षा में सुकरात की अध्यापन शैली के बारे में चर्चा करने पर मिला, वह मुझे भली-भांति याद है । मेरे कई विद्यार्थी विशिष्ट शिक्षा में अतिरिक्त प्रमाणीकरण या स्नातक उपाधि के लिए अध्ययनरत थे । उन्होंने मुझे निर्णायक रूप से यह समझाया कि सुकरात की अध्यापन शैली उनके विद्यार्थियों पर असर नहीं करेगी । विशिष्ट शिक्षा के अनुभवी अध्यापकों (जो मेरे विद्यार्थी थे) ने यह दावा किया कि उनके विद्यार्थियों को नियंत्रण एवं पदानुक्रम पर आधारित एक प्राय: सख्त अध्यापन शैली की आवश्यकता है। शिक्षण के इन अनुभवी महारथियों को बाई की यह धारणा शायद बहुत विचारो-उत्तेजक एवं उनकी अपनी तंग जिंदगी के बारे में मनन के लिए सुखद महसूस होगी । फिर भी मुझे डर है कि वे सुकरात की अध्यापन शैली जैसे ही, लयबद्धता को भी अपने विशेष जरूरत वाले विद्यार्थियों के लिए अनुपयुक्त एक असार एवं अव्यवहारिक आदर्श ठहरा कर अस्वीकार करेंगे ।◆